Variorum Multi-Disciplinary e-Research Journal
Vol.,-05, Issue-I, February 2014

एक औरत: तीन बटा चार - सुधा अरोडा (कथा संग्रह)- एक समीक्षा

डॉ. सरिता बहुखंडी:घोड़बंदर रोड, ठाणे

समाज में सुखी, समृद्ध, संभ्रात कही व मानी जाने वाली स्त्रियों का घर नामक सुरक्षित मानी जानेवाली चार दिवारों के भीतर पुरुष प्रधान सत्ता व सामाजिक व्यवस्था के द्वारा होनेवाले बौध्दिक और भ्रांतिक शोषण को शब्दरुपी वाणी देकर सामाजिक परिवर्तन की माँग को अनिवार्य बनाने में जुटी लेखिका सुधा अरोड़ाजी की कहानियाँ महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। अपने लेखन ही नहीं बल्कि निजी जीवन में भी महिला सलाहकार केंद्र 'हेल्प' तथा 'विमेन्स वर्ल्ड' में उनकी सक्रिय भागीदारी किसी से छिपी नहीं है। यह भी एक महत्वपूर्ण कारण है जिससे उनका पूरा लेखन सजीव हो उठता है : और उनकी कहानियाँ मात्र कहानी न बन समय का वह तुकड़ा बन कर जीवित हो जाती है जिसकी मुख्य किरदार कहानी का पात्र नहीं बल्की आप स्वयं होते है। कहानी पढ़ने के पश्चात अर्थात उस समयांश को जीने के बाद मजबूर, असहाय और अकेले। इस तरह वे कहानी दर कहानी, परतें उधेड़ती चलती है उस सभ्य समाज की जहाँ पहुँचने का सपना वे स्त्रियाँ देखना चाहती हैं जो अभी संघर्ष के शुरुवाती चरण में है अर्थात सुधाजी के ही शब्दों में कहूँ तो - 'रहोगी तुम वही।,

उनके बारे में वरिष्ट कथाकार चिंतक मुद्राराक्षस लिखते हैं - ''कुछ कहानियाँ ऐसी होती हैं जो कहानी से बहुत ज्यादा कुछ होती हैं शायद एक लंबा और बाढ़ के पानी की तरह उमड़ गया गंदला इतिहास या किसी ममी में तब्दील कर दिया गया समाजशास्त्र '' चंद शब्दों में कहूँ तो सुधाजी की कहानियों की इससे उत्तम परिभाषा नहीं हो सकती

कथासंग्रह - 'एक औरत:तीन बटा चार, में सुधाजी की कुल १४ छोटी कहानियाँ सम्मिलित हैं। पुस्तक को देखने पर एक बार शायद यह भ्रम हो जाए कि इसे एक बार में ही पूरा पढ़ा जा सकता हैं, परंतु कहानी है कि आपको आगे बढ़ने ही नहीं देती सोचने पर मजबूर कर देती है। स्त्री जीवन का सिमटा आकाश उसका परिवार ही उसे स्वच्छंद उड़ने की आजादी नहीं देता और बचा समाज तो वह व्याध की भूमिका भली-भाँति अदा करता है। चैन से ली खुली साँस उसकी आखिरी भी हो सकती है।

www.gjrmrws.in

Variorum Multi-Disciplinary e-Research Journal
Vol.,-05, Issue-I, February 2014

'एक औरत तीन बटा चार' में कथा लेखिका सुधाजी संभ्रांत मध्यम वर्गीय स्त्री के जीवन का सच बड़ी सादगी से बयाँ करती हैं। घर के साहब (पति) और बच्चों के सारे साजो -सामान वक्त पर हाजिर करना, हर एक के लिए उसके पर्सनल नौकर की भूमिका अदा करना वो भी पत्नी और माँ जैसे नारी जाति के सर्वोच्च गरिमामंडित पद पर आसीन बिल्कुल अपने आप को विसराए हुए और उसकी इस दिनचर्या में यदि उसे समय मिल भी जाए तो केवल तब तक जब तक कि इनमें से कोई घर पर नहीं है। इस तरह घर के बाहर रहते हुए भी हमेशा घर से जुड़े रहना ही उसका जीवन है, साहब है कि 'लौटते और लौटने के बाद भी वहाँ ही होते जहाँ से लौटे थे। और आखिरकार साहब के बाएँ हिस्से में आई कमजोरी २४ घंटे सहारे की जरुरत में उसकी बाकी की जिंदगी होम हो जाती है और अब उसे अपना समय कहीं बिताने की जरुरत ही नहीं क्योंकि साहब के लिए वह उस लाठी का रुप है या माँस का वह लोथड़ा है जिसे कभी भी कैसे भी एडजस्ट किया जा सकता है।

'अन्नपूर्णा मंडल की आखिरी चिठठी' में माता-पिता का बेटी के प्रति आजीवन नि:स्वार्थ प्रेम, मंगलमय भाव उनके साथ बिताए प्रेम में सगे-पले बढ़े क्षण ही बेटी को सदा अपना सा प्रतीत होता है। वैसे ही प्रेम को ससुराल में सूद समेत उँडलने व अपने संम्पूर्ण समर्पण के बावजूद इतनी कडुआहट और तिरस्कार क्यों मिलता है? सोचने पर मजबूर कर देता है। अन्नपूर्णा मंडल कहानी की पात्र 'बाकुंडा' के अपने छोटे से घर में भी कितनी खुश थी। परंतु मुंबई जैसे महानगर में विवाह के पश्चात परिस्थितीयाँ कितनी भिन्न हो जाती है। माइके में नमक डालकर केंचुओं को मार देनी वाली अन्नपूर्णा को ससुराल में वहीं केंचुए अपने सगे प्रतीत होते है क्योंकी यही एक मात्र वह चीज है जो दोनों जगह समान थी और यही कारण है की जब उसकी सास उन केंचुओं पर गालियाँ बरसाते हुए उबलता पानी डालती है तो उसे ऐसा प्रतीत होता है जैसे वह पानी उन पर नहीं बल्की उसी पर पड़ा हो। दो बेटियों को जन्म देने पर अन्नपूर्णा मानी जानेवाली बेटी यह सुन-सुनकर शून्य हो उठती है ''एक कपालकुण्डला को अस्पताल भेजा था, दो को और साथ ले आयी।'' और अंत में अपने उसी बाबा पर उसका अपना बस लगता है और जाते-जाते प्रार्थना का आखिरी स्वर - ''इन दोनों को अपनेपास ले जा सको तो ले जाना। बावला और बउदी शायद इन्हें अपना लें।बस इतना चाहती हूँ कि बड़ी होने पर ये दोनों अगर आसमान को छूना चाहें तो यह जानते हुए भी कि वे आसमान कभी छू नही पाएंगी,

ISSN 976-9714

www.ghrws.in

Variorum Multi-Disciplinary e-Research Journal
Vol.,-05, Issue-I, February 2014

इन्हे रोकना मत।''अपने अधूरे सपनों को बेटियों द्वारा पूरा करने की चाह जो मात्र बाकुंडा में ही संभव था यहाँ नहीं । माईके में मिले प्रेम पर विश्वास दर्शाता है ''इन दोनों के रुप में तुम्हारी बेटी तुम्हें सूद सहित वापस लौटा रही हूँ। इनमें तुम मुझे देख पाओंगे शायद।

रहोगी तुम वहीं कहानी में बड़ी संजीदगी से सुधाजी ने दर्शाया है की पुरुष किस तरह अपने दैनंदिन निजी जीवन की खीझ अपनी बीबी पर उतारता है और ठीक पति के अनुरुप ढलने पर फिर किस तरह अपनी कही बात से मुकर भी जाता है। वह ताने मारने से बाज नहीं आता - 'रहोंगी तो तुम वही स्त्री अपने आपको कितना भी सँवा ले, कितना पढ़ लिख ले पति के आगे उसकी कोई कदर नहीं। कहानी सत्ता संवाद में समस्या ठीक विपरित है। यहाँ स्त्री के ही हाथों सारा दारोमदार है। पति लेखक है कभी कुछ पा गए तो ठीक अन्यथा पूरा घर पत्नी के खर्चे से चलता है। बावजूद इसके घर और बाहर की सारी जिम्मेदारियाँ उसी की हैं। निकम्मे बाप-बेटे किसी तरह की कोई मदत नहीं करते और स्त्री अपने इस रोज की झल्लाहट का समाधान अपनी बक-बक में ही ढूँढ लेती है।

करवाचौथी औरत में सविता का करवाचौथ के दिन सुबह से निर्जला व्रत होने पर घर के किसी सदस्य को कोई हमदर्दी नहीं है। परंतु वहीं कुतिया को उस दिन उसका पसंदीदा भोजन न देने पर बच्चों और पति दोनों को सविता से आपत्ति है और बदले में उसे सुनना पड़ता है -''पापा, देखो ना, मॉम इस टॉचरिंग पुअर लिटिल सोल।'' और पति का तुरंत कहना व्हॉट रबिश, यू कांट बी सो क्रुएल व खुद ही बौखलाते हुए उसके लिए उसका मनपसंद खाना देना। आखिरकार खूब जोरों की लगी भूख में पूजा के दौरान सविता को अपने से भाग्यशाली कुतिया फ्लॉपी ही जान पड़ती है जिसकारण वह अगले जनम में फ्लॉपी जैसा ही बनना चाहती है।

ताराबाई चॉल कमरा नंबर एक सौ पैंतीस में उस स्त्री की दास्ताँ है जो अपने पति की चौदह दिन पूर्व हुई मौत की वारदात को याद कर रोती है और उसकी वहशियत को कुछ क्षण के लिए जीती है।सहवास के दौरान बीड़ी या सिगरेट सुलगाकर उसके बदन को जहाँ-तहाँ दाग देना ही जिसका प्रिय शगल था। लेकिन बगावत कब, कहाँ किससे और कैसे करे जो पति'पत्नि के अत्यंत पवित्र पूजा जैसे

www.ghrws.in

ISSN 976-9714

Variorum Multi-Disciplinary e-Research Journal
Vol.,-05, Issue-I, February 2014

क्षणों में ही नारकीयता का बोध कराए और उसकी पीड़ा जो सीधे ह्दय को ही दाग दे। प्रेम पनपे भी तो कैसे?

'डेजर्ट फोबिया उर्फ समुद्र में रेगिस्तान' की नायिका छवि का विवाह दस, आठ व छः वर्ष के तीन बेटों के अत्यंत समृद्ध बाप के साथ हुआ। परंतु उसे घर में कभी भी वह अपनापन नहीं मिला। माँ बनने व बच्चों की किलकारियाँ उसके लिए सपना ही बनकर रह गया। जिसकारण कई वर्ष बीतने पर भी वह 'अपने बच्चे की माँग कर बैठती है और साहब है कि उन्होंने कभी उसके दिल के द्वार तक पहुँचने की कोशिश भी नहीं की, समझना तो बहुत ही दूर की बात है। पति के गुजरते ही बच्चों को अपना अपना हिस्सा लेकर अलग हो जान अपने के नाम पर छवि के पास मात्र यह घर ही शेष रह जाता है। अचानक कई वर्षो बाद अपने पुराने मित्र का मिलने व उसके परिवार के हालचाल पूछने पर उस मरुस्थल में छवि टूट पड़ती है। क्षणभर के लिए मिला उसका पुराना प्यार उसे यह सोचने पर मजबूर कर देता है कि प्यार और अपनापन तो बहुत दूर की बात किसी को छवि याद है भी या नहीं।

डर बहुत छोटी सी कहानी। एक पत्नी का अपने पति की प्रेमिका के बारे में ज्ञात होते हुए भी ऊपर से अनजान बने रहने की झूठीं सच्चाई दर्शाता है, जैसे कसूर उसी का हो क्योंकी वह सच्चाई जान कर प्रकट करने व उसके बाद हालातों को झेलने की न उसकी ताकत है और न उसमें साहस!।

नमक नामक कहानी स्त्री जीवन के समस्त सार को नमक के रुप में ही चित्रित कर बतलाती है। किसी भी उम्र और किसी भी हालातों में उससे हुई एक छोटी सी भूल भी उसके दांपत्य जीवन को डमाडोल कर जाती है। नमक न डालने की एक छोटी सी भूल उसके चरित्र से लेकर तलाक तक पहुँच जाती है। आजीवन उसके नसों में वह अनचीन्हा खौफ दहशत बन कर पलता रहता है। शादी के तीस वर्षो बाद भी 'तीसरी बेटी के नाम - ये ठंडे, सूखे बेजान शब्द।' में बेटी के जन्म पर समाज में आज भी फैली मातमपुर्सी बयान करती है खासकर वह तीसरी हो तो और भी। माँ के लिए तो बेटी-बेटा दोनों एक ही समान हैं उसी के कतरा-कतरा खून और उसी की आत्मा का नन्हा अंश पल्लवित , पुष्पित और फलित होने हेतु अंकुरित, पर समाज का उनक साथ होनेवाला भेद-भाव ही उसे बेटी और बेटा मानने पर मजबूर करता है। कहानी में लेखिका ने बडी संजीदगी से दर्शाया है किस तरह

ISSN 976-9714

www.ghrws.in

Variorum Multi-Disciplinary e-Research Journal
Vol.,-05, Issue-I, February 2014

पति की दुनिया से आगे बढ़ने की उमंग और साहस उसकी जान के साथ उसके चरित्र को भी कलंकित कर देती है और उसकी चिता पर इन ठंडे बेजान शब्दों के अलावा माँ कुछ नही ंरख पाती - ‘पर सुन मेरी बच्ची! अपनी कटी हुई हथेलियाँ न फैलाना उस बनाने वालें के सामने कि पिछली बार तुझे बनाते समय उसने जो भूल की थी, उसे सुधार ले! नहीं तुझे तो फिर फिर वही बनना है!फिर फिर औरत! सौ जन्मों तक औरत! तब तक औरत, जब तक तेरे हिस्से का आसमान, तेरे और सिर्फ तेरे नाम कर दिया जाए!‘

बड़ी हत्या-छोटी हत्या में दहेज की बर्बरता से पीड़ित समाज को दर्शाया है। कितना भी देने पर असंतुष्ट ससुराल वाले बेटी की हत्या कर देते हैं। उससे अच्छा जन्म लेते ही बेटी को मार देना यह छोटा पाप उस बड़े पाप से अच्छा दर्शाया है।

‘सुरक्षा का पाठ‘ नामक कहानी में बदलती सांस्कृतिक, पारिवारिक, पीढ़ीयांतर व देशांतर की स्थिति के चलते व्यक्ति के अपनाए गए, माने गए सारे विश्वास झूठे बन जाते है और परदेश से चंद दिनों के लिए रहने आए बेटे की माँ यह यकिन भी नहीं कर पाती कि किस तरह बच्चे पालने का यह तरीका भी सिक्के का दूसरा पहलू है।

‘दहलीज पर संवाद‘ नामक कहानी में बूढ़े अकेले रहते माता‘पिता के घर बेटा परिवार समेत जब छुट्टियाँ मनाने आता है तो खर्च देना और पूछना तो दूर कि बात, बेटे के आने की खुशी में उनका ही खर्च चौगुना हो जाता है। उस पर माँ-बाप का सोचना कि हाथ-पाँव के चलते यह दुर्गत है तो आगे की कैसे कटेगी। बेटे का ट्रांसफर अब इतनी दूर हो रहा है कि जहाँ आने-जाने में ही तीन-तीन दिन लग जाते हैं। वक्त-बे-वक्त इन बूढ़े माँ-बाप को कभी कुछ हो गया तो आखिरी कंधे देने का सहारा भी अपना नहीं , यह सोचते ही उनकी रुह काँप जाती है।

इस तरह कुल चौदह कहानियाँ हैं जो अपने आप में अनूठी, अनुपम व अनोखी है व स्त्री-जीवन में प्रेम की कमी, असमानता के चलते पनेपे उस कडुए सच को बयाँ कर जाती है जो किसी न किसी रुप में हर घर की वास्तविक स्थिती है।

www.ghrws.in

Variorum Multi-Disciplinary e-Research Journal
Vol.,-05, Issue-I, February 2014

संदर्भः-

१) मुद्राराक्षस - वरिष्ठ कथाकार - चिंतक (वागर्थ अक्टूंबर २००२ में प्रकाशित आलेख 'एक कहानी का रचना जगत' से उद्धृत कुछ अंश)

www.ghrws.in